समय का इन्तजार न कर एवररेडी रहने वाला ही सच्चा पुरुषार्थी

जैसे परीक्षा का समय नजदीक आता जा रहा है तो अपने सम्पूर्ण स्थिति का भी प्रत्यक्ष साक्षात्कार वा अनुभव प्रत्यक्ष रूप में होता जाता है? जैसे नम्बरवन आत्मा अपने सम्पूर्ण स्टेज का चलते फिरते प्रैक्टिकल रूप में अनुभव करते थे वैसे आप लोगों को अपनी सम्पूर्ण स्टेज बिल्कुल समीप और स्पष्ट अनुभव होती है? जैसे पुरुषार्थी ब्रह्मा और सम्पूर्ण ब्रह्मा दोनों ही स्टेज स्पष्ट थी ना। वैसे आप लोगों को अपनी सम्पूर्ण स्टेज इतनी स्पष्ट और समीप अनुभव होती है? अभी अभी यह स्टेज है, फिर अभी अभी वह होगी, यह अनुभव होता है? जैसे साकार में भविष्य का भी अभी-अभी अनुभव होता था ना। भल कितना भी कार्य में तत्पर रहते हैं लेकिन अपने सामने सदैव सम्पूर्ण स्टेज होनी चाहिए कि उस स्टेज पर बस पहुँचे कि पहुँचे। जब आप सम्पूर्ण स्टेज को समीप लायेंगे तो वैसे ही समय भी समीप आयेगा। समय आपको समीप लायेगा वा आप समय को समीप लायेंगे? क्या होना है? उस तरफ से समय समीप आयेगा, इस तरफ से आप समीप होंगे। दोनों का मेल होगा। समय कब भी आये लेकिन स्वयं को सदैव सम्पूर्ण स्टेज के समीप लाने के पुरुषार्थ में ऐसा तैयार रखना चाहिए जो समय की इन्तजार आपको न करनी पड़े। पुरुषार्थी को सदैव एवररेडी रहना है। किसको इन्तजार न करना पड़े। अपना पूरा इन्तजाम होना चाहिए। हम समय को समीप लायेंगे न कि समय हमको समीप लायेगा। नशा यह होना चाहिए। जितना अपने सामने सम्पूर्ण स्टेज समीप होती जायेगी उतनी विश्व की आत्माओं के आगे आपकी अन्तिम कर्मातीत स्टेज का साक्षात्कार स्पष्ट होता जायेगा। इससे जज कर सकते हो कि साक्षात्कार मूर्त बन विश्व के आगे साक्षात्कार कराने का समय नजदीक है वा नहीं! समय तो बहुत जल्दी-जल्दी दौड़ लगा रहा है। समय की रफ्तार तेज अनुभव होती है ना। इस हिसाब से अपनी सम्पूर्ण स्टेज भी स्पष्ट और समीप होनी चाहिए। जैसे स्थूल में भी स्टेज होती है तो सामने देखते ही समझते हैं कि इस पर पहुँचना है। इसी प्रमाण सम्पूर्ण स्टेज भी ऐसे सहज अनुभव होनी चाहिए। यह है तो सेकेण्ड की बात। अब सेकेण्ड में समीप लाने की स्कीम बनाओ वा प्लैन बनाओ। प्लैन बनाने में भी टाईम लग जायेगा लेकिन उस स्टेज पर उपस्थित हो जायें तो समय नहीं लगेगा। प्रत्यक्षता समीप आ रही है, यह तो समझते हो ना! वायुमण्डल और वृत्तियां परिवर्तन में आ रही हैं, इससे भी समझना चाहिए कि प्रत्यक्षता का समय कितना जल्दी-जल्दी आगे आ रहा है। मुश्किल बात सरल होती जा रही है। संकल्प भी सिद्ध होते जा रहे हैं। निर्भयता और संकल्प में दृढ़ता, यह है सम्पूर्ण स्टेज के समीपता की निशानी। यह दोनों ही दिखाई दे रहे हैं ना! संकल्प के साथ-साथ आपकी रिजल्ट भी स्पष्ट दिखाई दे। इसके साथ-साथ फल की प्राप्ति भी स्पष्ट दिखाई दे। यह संकल्प है यह इसकी रिजल्ट। यह कर्म है, यह इसका फल है, ऐसा अनुभव होता है? इसको ही प्रत्यक्ष फल कहा जाता है। अच्छा!

जैसे बाप के तीन रूप प्रसिद्ध हैं, वैसे अपने तीनों रूपों का साक्षात्कार होता रहता है? जैसे बाप को अपने तीनों रूपों की स्मृति रहती है, ऐसे ही चलते फिरते अपने तीनों रूपों की स्मृति रहे कि हम मास्टर त्रिमूर्ति हैं। तीनों कर्तव्य इकट्ठे साथ-साथ चलने चाहिए। ऐसे नहीं--स्थापना का कर्तव्य करने

का समय अलग है, विनाश के कर्तव्य का समय अलग है। नहीं। नई रचना रचते जाते हैं और पुरानी का विनाश। आसुरी संस्कार वा जो भी कमजोरियाँ हैं उनका विनाश भी साथ-साथ करते जाना है। नये संस्कार ला रहे हैं, पुराने संस्कार खत्म कर रहे हैं। तो सम्पूर्ण और शक्ति रूप, विनाशकारी रूप न होने कारण सफलता नहीं हो पाती है। दोनों ही साथ होने से सफलता हो जाती है। यह दो रूप याद रहने से देवता रूप आपेही याद आयेगा। दोनों रूप की स्मृति को ही फाईनल पुरुषार्थ की स्टेज कहेंगे। अभी अभी ब्राह्मण रूप, अभी अभी शक्ति रूप। जिस समय जिस रूप की आवश्यकता है उस समय वैसा ही रूप धारण कर कर्तव्य में लग जायें, ऐसी प्रैक्टिस चाहिए। वह प्रैक्टिस तब हो सकेगी जब एक सेकेण्ड में देही-अभिमानी बनने का अभ्यास होगा। अपनी बुद्धि को जहाँ चाहें वहाँ लगा सकें, यह प्रैक्टिस बहुत जरूरी है। ऐसे अभ्यासी सभी कार्य में सफल होते हैं। जिसमें अपने को मोल्ड करने की शक्ति है वही समझो रीयल गोल्ड है। जैसे स्थूल कर्मेन्द्रियों को जहाँ चाहे मोड़ सकते हो ना। अगर नहीं मुड़ती हैं तो उसको बीमारी समझते हैं। बुद्धि को भी ऐसे इज़ी मोड़ सकें। ऐसे नहीं कि बुद्धि हमको मोड़ ले जाये। ऐसे सम्पूर्ण स्टेज का यादगार भी गाया हुआ है। दिन प्रतिदिन अपने में परिवर्तन का अनुभव तो होता है ना! संस्कार, स्वभाव वा कमी को देखते हैं तब नीचे आ जाते हैं, तो अब दिन प्रतिदिन यह परिवर्तन लाना है। कोई का भी स्वभाव-संस्कार देखते हुए, जानते हुए उस तरफ बुद्धियोग न जाये और ही उस आत्मा के प्रति शुभ भावना हो। एक तरफ से सुना दूसरे तरफ से खत्म। अच्छा।

मरजीवा जन्म का महत्व

(अव्यक्त महावाक्य)

ब्रह्माकुमार, ब्रह्माकुमारी बनना अर्थात् मरजीवा बनना। ये मरना तो बहुत सहज हो गया। उस जीवन से मर गये अर्थात् ब्रह्माकुमार कुमारी बन गये। लेकिन ब्रह्माकुमार कुमारी बनने के बाद जो बार-बार मरना पड़ता है ये बहुत मुश्किल है। मुश्किल है ना? छोटियाँ कहती हैं कि हमको ही ज्यादा मरना पड़ता है और बड़े कहते हैं कि हमको ही ज्यादा सुनना पड़ता है। तो आपको सहन करना पड़ता, उन्हों को सुनना पड़ता, तो मरना किसको है? कौन मरें? एक मरे, दोनों मरें? दोनों ही मर गये तो बात खत्म, खेल खत्म। जैसे हिम्मत से मरजीवा बनने में भय नहीं किया, खुशी-खुशी से किया, ऐसे खुशी-खुशी से परिवर्तन करना है। मरना शब्द नहीं है लेकिन आपने मरना-मरना शब्द कह दिया है इसलिए डर जाते हैं। वास्तव में ये मरना नहीं है लेकिन धारणा की सब्जेक्ट में नम्बर लेना है। तो सहन करने में घबराओ मत।

जब ब्राह्मण परिवार में कोई परिस्थिति आती है तो चाचा, काका, मामा याद आते हैं? बापदादा देखते हैं कि परिस्थिति के समय कई आत्माओं को ब्राह्मण परिवार के बजाय लौकिक सम्बन्ध जल्दी स्मृति में आता है। परिस्थिति किनारे के बजाय सहारा अनुभव कराती है। जब मरजीवा बन गये तो अगले जन्म के सम्बन्धी काका, चाचा, माँ, बाप, याद हैं क्या? स्वप्न में भी आते हैं क्या? तो सम्बन्ध और जन्म बदल गया ना। तो फ़रिश्ता अर्थात् पुराने से रिश्ता नहीं, यही परिभाषा बोलते हो ना? फिर समय पर कहाँ से निकल आते हैं? टूटा हुआ रिश्ता जुड़ जाता है? मरे हुए से जिन्दा हो जाते हो? फ़रिश्ता अर्थात् पुराने से रिश्ता नहीं, सब नया।

अशरीरी का अर्थ है कि शरीर की कोई भी आकर्षण आत्मा को अपने तरफ आकर्षित नहीं करे। चाहे जिन्दा भी हैं, लेकिन जैसे जीते जी मरजीवा। वैसे आप सबका अपना शरीर तो है ही नहीं। मेरा शरीर कहेंगे या बाप की अमानत है? जब है ही बाप की अमानत तो अशरीरी बनना क्या मुश्किल है? मध्य काल भी आपका अति श्रेष्ठ है और अब लास्ट जन्म में यह जो मरजीवा ब्राह्मण जन्म है इसकी पर्सनालिटी देखो कितनी बड़ी है! गायन कितना है--कोई भी श्रेष्ठ कार्य अब तक भी आपके नामधारी ब्राह्मण ही करते हैं। चाहे ब्राह्मण अभी ब्राह्मण रहे नहीं हैं लेकिन नाम के तो ब्राह्मण है ना! आपके नाम से आपकी पर्सनालिटी के कारण वो भी श्रेष्ठ गाये जाते हैं। जब मरजीवा बन गये तो पुराने संस्कार की भी मृत्यु हो गयी, पुराने संस्कार इमर्ज हो नहीं सकते। बिल्कुल भूल जाओ--ये पुराने जन्म के हैं, ब्राह्मण जन्म के नहीं हैं। जब पुराना जन्म समाप्त हुआ, नया जन्म धारण किया तो नया जन्म, नये संस्कार। अगर माया पुराने संस्कार इमर्ज कराती भी है तो सोचो--अगर कोई दूसरे की चीज आपको आकर के देवे तो आप क्या करेंगे? रख देंगे? स्वीकार करेंगे? सोचेंगे ना कि ये हमारी चीज़ नहीं है, ये दूसरे की चीज मैं कैसे ले सकता हूँ? अगर माया पुराने जन्म के संस्कार इमर्ज करने के रूप में आती भी है तो आपकी चीज़ तो आई नहीं। सोचो--ये मेरी चीज़ नहीं है, ये पराई है। पराई चीज़ को संकल्प में भी अपना नहीं मान सकते हो। मान सकते हैं? सोचो--पराई चीज़ जरूर धोखा देगी, दु:ख देगी। सोचकर के उसी सेकेण्ड पराई चीज़ को छोड़ दो, फेंक दो अर्थात् बुद्धि से निकाल दो। पराई चीज़ को अपनी बुद्धि में रख नहीं लो। नहीं तो परेशान करते रहेंगे।

सदा ये सोचो कि--ब्राह्मण जीवन में बाप ने क्या-क्या दिया, ब्राह्मण जीवन का अर्थात् मेरा निजी स्वभाव, संस्कार, वृति, दृष्टि, स्मृति क्या है? ये निजी है, वो पराई है। साधारण कर्म की समाप्ति हो गई क्योंकि मरजीवा हो गये ना। तो साधारणता से मर गये, विशेषता में जी रहे हैं माना नया जन्म हो गया। तो साधारणता पास्ट जन्म की नेचर है, अभी की नहीं क्योंकि नया जन्म ले लिया। तो नये जन्म की नेचर विशेषता है--ऐसे अनुभव हो। तो अभी क्या करेंगे? साधारणता की समाप्ति। संकल्प में भी साधारणता नहीं। तो यह चेक करो कि सदा अलौकिक जीवन में हूँ या साधारण जीवन में हूँ? क्योंकि नया जन्म हो गया! जन्म नया है तो सब-कुछ नया है और सभी को प्रिय भी नया लगता है, न कि पुराना। तो नई जीवन में नई बातें हैं। पुराना समाप्त हो गया। समाप्त हुआ है या आधे वहाँ जिंदा हो, आधे यहाँ जिंदा हो? आधा शूद्र तरफ, आधा ब्राह्मण तरफ - ऐसे तो नहीं है ना? श्रेष्ठ जीवन को भूलकर साधारण जीवन को कौन याद करेगा! कोई को राजाई मिल जाए और फिर भी गरीबी को याद करता रहे, तो उसे क्या कहेंगे? भाग्यवान कहेंगे? तो स्वप्न में भी पुराना जीवन याद नहीं आये। जब मर गये तो याद कहाँ से आयेगा! आधा तो नहीं मरे हो? पूरा मर गये हो ना! जो आधा मर जाता है, पूरा नहीं मरता, तो अच्छा नहीं लगता है ना! जब ऐसी बढ़िया जीवन मिल गई तो पुरानी जीवन याद आ नहीं सकती। तो ऐसे मरजीवा बने हो या आधा मरे हो?

मरजीवा बने ही हो सन्तुष्ट रहने के लिए। ''इच्छा मात्रम् अविद्या'' - यह गायन किसका है? देवताओं का या ब्राह्मणों का? देवताई जीवन में तो इच्छा वा न इच्छा का सवाल ही नहीं। यहाँ नॉलेज है - इच्छा क्या है और निरइच्छा क्या है। तो नॉलेज होते ''इच्छा मात्रम् अविद्या'' होना, इसी को ही ब्राह्मण-जीवन कहा जाता है। किस चीज़ की इच्छा है? जब रचयिता अपना हो गया तो रचना

कहाँ जायेगी? रचयिता को अपना बना लिया है ना, अच्छी तरह से बनाया है, ढीला-ढीला तो नहीं?

आप ब्राह्मण आत्माओं के लिए इस अन्तिम मरजीवा जन्म में हर कर्म की सफलता का फल अर्थात् गति प्राप्त होने का वरदान मिला हुआ है। वर्तमान और भविष्य - सदा गति-सद् गति है ही है। भविष्य की इंतजार में तो नहीं रहते हो? संगमयुग की प्राप्ति का यही महत्व है। अभी-अभी कर्म करो और अभी-अभी प्राप्ति का अधिकार लो। इसको कहते हैं एक हाथ से दो, दूसरे हाथ से लो। कभी मिल जायेगा वा भविष्य में मिल जायेगा, यह दिलासे का सौदा नहीं है। तुरंत दान महापुण्य, ऐसी प्राप्ति है। इसको कहते हैं झटपट का सौदा।

ब्राह्मण अर्थात् समर्थी स्वरूप। मरजीवा बने तो पहली प्रतिज्ञा कौनसी की? यह भी अच्छी तरह से जानते हो - वायदा क्या किया, उसको भी जानते हो। बाप ने वायदा कराया और आपने स्वीकार भी किया। स्वीकार करने के बाद फिर क्या करते हो? बाप ने कहा शूद्रपन के विकारी संस्कार छोड़ो - आत्मा के विकारी संस्कार रूपी चोला परिवर्तन किया और ईश्वरीय संस्कार का दिव्य चोला पहना। शूद्रपन की निशानियाँ अशुद्ध वृत्ति और दृष्टि परिवर्तन कर पवित्र दृष्टि और वृत्ति विशेष निशानियाँ धारण की - सर्वश्रेष्ठ ते श्रेष्ठ सम्बन्ध और सम्पत्ति के अधिकारी बने - यह भी अच्छी तरह से याद है, कहा जाता है स्टूडेन्ट लाइफ इज़ दी बेस्ट लाइफ। तो कौन हो आप? बच्चे हो या बूढ़े हो? बच्चा अर्थात् निर्बन्धन। अगर अपने को पास्ट जीवन वाले समझेंगे तो बन्धन है, मरजीवा हो गये तो निर्बन्धन। चाहे कुमार हो, चाहे वानप्रस्थी हो लेकिन सब बच्चे हैं। सिर्फ एक कार्य जो बाप ने दिया है ''याद करो और सेवा में रहो'', इसी में सदा बिज़ी रहो। ये मरना अर्थात् स्वर्ग में जाना इसलिए मरने वाले के लिए कहते हैं स्वर्ग गया। वह मरने वाले नहीं जाते हैं, लेकिन संगम पर जो मरा, वह स्वर्ग गया। इसकी कॉपी करके जो देह से मरते हैं उसके लिए अखबार में डालते हैं कि फलाना स्वर्ग गया। तो यह मरना पसन्द है ना! अपनी मर्जी से मरे हो ना, मजबूरी से तो नहीं! यह सारी सभा मरजीवा बनने वालों की है। कहाँ साँस रूका हुआ तो नहीं है ना पुरानी दुनिया में? यही वन्डर है जो मरे हुए भी हँसते हैं। जैसे बाप लोन लेता है, बंधन में नहीं आता, जब चाहे आये, जब चाहे चला जाये, निर्बन्धन है। ऐसे सब सेवाधारी शरीर के, संस्कारों के, स्वभाव के बधनों से मुक्त, जब चाहें जैसे चाहें वैसा अपना संस्कार बना सकें। इसको कहते हैं मरजीवा। अच्छा।

वरदान:- निर्बल, दिलशिकस्त, असमर्थ आत्मा को एकस्ट्रा बल देने वाले रूहानी रहमदिल भव

जो रूहानी रहमदिल बच्चे हैं–वह महादानी बन बिल्कुल होपलेस केस में होप पैदा कर देते हैं। निर्बल को बलवान बना देते हैं। दान सदा गरीब को, बेसहारे को दिया जाता है। तो जो निर्बल दिलशिकस्त, असमर्थ प्रजा क्वालिटी की आत्मायें हैं उनके प्रति रूहानी रहमदिल बन महादानी बनो। आपस में एक दूसरे के प्रति महादानी नहीं। वह तो सहयोगी साथी हो, भाई भाई हो, हमशरीक पुरूषार्थी हो, सहयोग दो, दान नहीं।

स्लोगन:-

सदा एक बाप के श्रेष्ठ संग में रहो तो और किसी के संग का रंग प्रभाव नहीं डाल सकता।